International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 254-255

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 254-255
www.allresearchjournal.com
Received: 22-11-2015
Accepted: 24-12-2015

कपिल कुमार सैनी
पटेल बस्ती, बेगु रोड सिरसा।

Correspondence
कपिल कुमार सैनी
पटेल बस्ती, बेगु रोड सिरसा।

संत नितानंद के काव्य में भक्ति एवं आध्यात्मिक दर्शन

कपिल कुमार सैनी

प्रस्तावना

भक्ति मानव प्रकृति का नैसर्गिक लक्षण है। भारतीय धारा की पहचान भी आध्यात्मिक पुरोधा के रूप में रही हैं। किसी भी देश, समाज अथवा क्षेत्र में व्यक्ति की समाज एवं वातावरण के प्रति अजस्र प्रतिक्रिया होती रहती हैं। यह प्रक्रिया 2 प्रकार से होती हैं–बाह्य और आंतरिक। ये विशेष व्यक्ति अपने दार्शनिक चिन्तन का युक्तिपूर्वक प्रतिपादन करते हैं।[1] यह दर्शन युक्तिपूर्वक होने के कारण चिन्तनशील व्यक्तियों के ऊपर अपना प्रभाव छोड़ता हैं[2] जो बाद में उपदेशों, शिक्षा, धर्मगुरूओं द्वारा समाज में प्रचारित होता है जो किसी भी समाज में रीति, परम्परा व मान्यताओं में तब्दील हो जाता है। समयानुसार दर्यान चिन्तन परिपक्व रूप धारण कर आध्यात्मिक शक्ति में तब्दील हो जाता है। यह दार्शनिक चिन्तन, धार्मिक नैतिक एवं सौन्दर्य विश्वास में रूपान्तरित हो जाता है।[3] भारतवर्ष में भक्ति शक्ति प्रमुख रूप से 3 वर्गों में भास्वरित हुई है– वैदिक भारत, बौद्ध भारत और मुस्लिम भारत।[4] वैदिक भारत में अध्यात्म का आकार निराकर भी रहा है व साकार भी तथा परम तत्त्व पर भी आधारित रहा है। सतचित् आनन्दमय ब्रह्म साकार है और निराकर भी, सगुण भी है व निर्गुण भी, सावधि है च निरवधि भी, बाह्य और आंतरिक भी है।[5] वेद पुराण उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि और न जाने उन कितने भाष्य उसके विवेचन में लिखे गए। नेति–नेति कहकर ऋषियों–मनीषियों की वाणी जिसका गुणनुवादन करके थकी नहीं।[6] मूकास्वादनवत् कहकर जिस आनन्दानुभूति का वर्णन कोई कर नहीं पाया। माँ शारदा भी जिसका वर्णन श्रृंखला की एक कड़ी के रूप में अनेक ज्ञान मंथन आवान्तर गति से होते रहे हैं जो मुक्ति के मार्ग का अन्वेषण करते हैं।[7] आत्मा व परमात्मा का मिलन योग की उत्पत्ति का कारक है। योगी को ज्ञान की प्राप्ति होकर जो उसका अज्ञान से वियोग होता है, वही मुक्ति है।[8] ब्रह्म के साथ एकता एवं प्राकृत गुणों से पृथक् होना है, मुक्ति होती है योग से।[9] जो अध्यातम को पूर्णता प्रदान करती है। वैदिक धर्मग्रन्थों को इतना विशाल और समृद्ध भण्डार है कि भारतीय सांस्कृतिक जीवन की प्रत्येक गतिविधि पर उसका प्रभाव परिलक्षित होता है।[10] भारतभूमि में सभी धर्म एवं सम्प्रदायों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से वैदिक चिन्तन से सम्बन्ध रहा है।[11] वैदिक साहित्य को संहिता, ब्राह्मणों में कर्मकाण्ड व आरण्यकों में उपासना पद्धति के दिग्दर्शन होते हैं।[12] उपनिषदों के ब्रह्म को समान इन्द्रातीत, अगम्य, अगोचर व अनिर्वचनीय तत्त्वरूप माना है। श्रुति ग्रन्थों के परिशीलन से स्पष्ट ही जान पड़ता है कि ब्रह्म की मान्यता दो स्वरूपों में है। प्रथम निर्गुण, निर्विशेष, निराकार और निरूपाधि एवं दूसरे इन सब बातों से मुक्त अर्थात् सगुण, सविशेष, साकार और सोपाधि।[13] साधारणतः यह बात आश्चर्य करने वाली है कि–वह ब्रह्म स्वयंमेव में निराकार, निर्गुण, निर्विशेष और निरूपाधि है, किन्तु गलतफहमी के कारण जिसे हम माया भी कह सकते हैं, उसमें उपाधियों या सीमाओं का आरोप करते हैं।

वैदिक साहित्य में पांच मूल तत्वों का समावेष सन्निहित है। प्रथम भगवत् तत्व, जीव स्वरूप, ईष्वर नियन्ता, उन्मत, स्वरूप का प्रतिपादन।[14] पुराणों में आध्यात्मिकता का मूल स्वरूप योग को बतलाया है। योगी को ज्ञान की प्राप्ति होकर जो उसका अज्ञान से वियोग होता है, वही तो मुक्ति है। योग के अभाव में इसकी प्राप्ति असंभव है।

योग की प्राप्ति होती है– सम्यक् ज्ञान से। सम्यक् ज्ञान होता है वैराग्य जनक दुःख से और दुःख की प्राप्ति होती है, ममता से। ममता का कारण होता है स्त्री, पुत्र, धन आदि में चित की आशक्ति।[15] इस प्रकार सुख की लालसा वाला व्यक्ति इनका त्याग कर देता है। योगी को प्रथम आत्मा (बुद्धि) के द्वारा आत्मा (मन) को जीतने की चेष्टा करनी चाहिए, क्योंकि उसको जीतना अत्यंत कठिन है, अतः सतत् प्रयत्नशील रहे। इस प्रकार प्राणायाम के द्वारा राग आदि दोषों का, धारणा[16] के द्वारा पा का, प्रत्याहार[17] के द्वारा विषयों का और ध्यान के द्वारा ईश्वरविरोधी गुणों का निवारण करें।[18] मोक्ष आध्यात्मिक मीमांसा की सर्वोच्च पदवी है। पुराणों में जिसकी चार अवस्थाएं बताई गई हैं– ध्वस्ति,

प्राप्ति, संवित् और प्रसाद।[19] चित की वासना को ध्वस्ति नष्ट करती है। लोभ मोह को विराम देकर स्वयंमेव संतुष्टि की भावना प्राप्ति अवस्था है। सूर्य, चंद्रमा, ग्रह, नक्षत्रों के समान प्रभावशाली होकर, दूरस्थित अदृश्य वस्तुओं को भी जान लेना 'संवित्' नामक अवस्था कहलाती है। प्राणायाम से मन, पांच प्राणवायु, संपूर्ण इंद्रियां व इंद्रियों के विषय प्रसाद को प्राप्त होते हैं, जो 'प्रसाद' अवस्था कहलाती है। श्रीमद्भगवद् गीता में दोनों ही तत्वों, ईश्वर तत्व, जीवन तत्व, प्रकृति रहस्य, ब्रह्मांडीय सृष्टि, काल नियंत्रण, जीवों के कर्मों का स्वरूप पर विवेचन किया है।

संत नितानंद की अवमानना है कि – ''जहां संत जन, ताहां आप भगवंत''[20] संत हरदेदास संत को ''संत मिले साहिब मिले, अंतर नाहीं कोय, जलदी बलती आत्मा, सीतल तब ही होय।'' के रूप में स्वीकार किया है। प्रायः सभी संतों की 'संत विषयक' ऐसी ही अवधारणा है। इस प्रकार 'संत' शब्द शिष्ट, शालीनता से परिपूर्ण व्यक्तित्व, ज्ञान का आगार, सुसभ्य एवं अंतश्चेतना का मर्मज्ञ से लिया जा सकता है जो इहलौक एवं परलौक दोनों का जानकार होता है।

साहित्य में संत साहित्य में नितादंन का नाम अविस्मरणीय है। हरियाणा का जन–जन नितानंद पंथ से परिचित है। इसकी वाणी 'सत्य सिद्धांत प्रकाश' की पुष्पिका में हमे इनेक भेष अर्थात पंथ की नामवली देखने को मिली। इनके समुदाय में आठवें स्थान पर भोला दास प्रज्ञाचक्षु का नाम आता है। जिन्होंने नित्यानंद की वाणी का 'सत्य सिद्धांत प्रकाश' के नाम से संपादन एवं प्रकाशन करवाया।[21] प्राज्ञाचक्षु जी के अनुसार शिष्य परंपराः–

प्रथम गुमानीदास जी, भये भेष को मूल।
नितादंन जी दूसरे, स्वामी आते अनुकूल।।
ध्यान दास भये तीसरे, चौथे, बिचितरदास।
बिसनदास पंचम लेखी, खट गुरू गोकुल दास।।
सप्तम मम गुरूदेव निज, दानीदास प्रकाश
प्रजाचक्षु नाम मम, अष्टम भोलादास।[22]

नितादंन पंथधारक संतों ने उस अवगति के दरबार तक–प्रवीन पद तक अथवा गैब की नूरी सेज तक पहुंचने के लिए 'लौ' का मार्ग धारण करना तथा मध्य अंग में ध्यान धरना प्रमुख हैं। उस सुन्न शहर तक पहुंचने के लिए 'लौ' का मार्ग धारण करो जिसका जीव ब्रह्म का एक्य संभव है। अमरपुरी की रोशनी घर के भीतर ही स्वीकार की है।

साधना संबंधी उपायों तथा मुक्ति के साथ–साथ कुछ अन्य बातों का ध्यान भी करना चाहिए। सद्गुरू षरण, सुमिरन, पतिव्रता के आदर्श, ब्रह्म में नेह, सांसारिक आर्कषणों के प्रति विरक्ति, पर बल दिया है। साधक का दोजख का भय तथा बहिसत की इच्छा न होकर दिल में एक परब्रह्म भरतार का ही ध्यान रहता है।[23] मन घी की ब्रह्म बाग की ओर मोड़ना नितांत आवष्यक है।[24] तभी उस परमतत्व की प्राप्ति संभव है।

सत्य सच्ची शिक्षा का मूलाधार माना है। जिनके कारण हरिशचंद्र अमर हुए। अतः परमगति को प्राप्त करने वाली निनतांदी पंथियों की कतिपय बाणियां निम्नवत हैंः–

ज्यों पहली बन सीत जलावै। बसंत रूचि पीछै आवै।।
पहल कसौटी हरिशचंद्र दीन्हीं। पीछे आई तास गति कीन्हीं।।
साध कसौटी सहन दुहेली। मौथों बिना भगति कहा में भी।।
साध संगति सब कोउ गावै। भौग्यां मन में लौ हवै तावै। [25]
संतों की वचन पालना करना सरल कार्य नहीं है।

यथाः

छत्री दोति कर लीजिए, लेषनि भार अपार।
तातै हरिशचंद सती बशान्यौं। भाव भगति कौ अरथ हिजायें।[26]

भवगत भक्ति की अपार महिमाः

उद्वि दोति कर लीजिए, लेशनि भार अपार।
'ध्यानदास' बसुधा लिषै, भगवंत भगत अपार। [27]

निश्कर्षः

कहा जा सकता है कि नितानंद की बाणीके अंत में लगभग 160 पृष्ठ में 'महाभारत इतिहास सार' कथा आई है। जिसका रचनाकर लालदास को माना जाता है। लालदास जी कहते हैं जो फल केदारनाथ जाने से मिलता है। वही फल इतिहास के सुनने से मिलता है। जो इस कथा को सुरेगा, सुनायेगा, और गायेगा उस भक्ति मुक्ति का वांछित फल प्राप्त होगा।[28] इस प्रकार नितानंद पंथी संतों के पौराणिक कथाओं का आश्रय लेकर उस परमतत्व को प्राप्त करने का साधन बतलाया है। उनकी यह परंपरा आज भी हरियाणा में अजस्र गति से चल रही है।

संधर्व सूची

1. सिन्हा, ए0के0, हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन, (सं0) साधुराम शारदा, पृ0 244।
2. वही।
3. वही।
4. संपला, बी0आर0, भारत माँ के सौतेले बेटे, पृ0 13।
5. श्री अद्वैतस्वरूप विवेकदयाल प्रकाश (जीवनचरित) श्री छोटे महाराज जी, पृ0 1।
6. वही।
7. वही।
8. पौद्दार, हनुमान प्रसाद, मार्कण्डेय पुराण, पृ0 128।
9. वही।
10. सिंह, पुष्पालाल, (सं0) कबीर ग्रन्थावली, पृ0 1।
11. व्ही, पृ0 2।
12. वही।
13. सिंह पुष्पालाल, (सं0) कबीर ग्रन्थावली, पृ0 2।
14. वही।
15. वही।
16. देशबंधश्चितस्य धारणा–किसी एक स्थान में चित को बांधना अर्थात् परमात्मा में मन को स्थापित करना 'धारणा' है।
17. प्रत्याहार–इंद्रियों को विषयों की ओर से हटाकर चित में लीन करना 'प्रत्याहार' कहलाता है।
18. मा0पु0, अहमित्यङ्कुरोत्पन्नो ममेतिस्कन्धवान् महान्। गृहक्षेत्रोच्चशाखश्च पुत्रादिपल्लवः।। पृ0 128
19. मा0पु0, पृ0 128।
20. सूरजभान, हरियाणा का संत साहित्य, पृ. 20।
21. स्वामी नित्यांदन कृत 'सत्य सिद्धांत प्रकाश' पृ. 568।
22. स्त्य सिद्धांत प्रकाश, परचा का अंग, प. 136–139।
23. वही, पतिव्रता का अंग, पृ. 1–6।
24. वही, मन का अंग, पृ. 57–60।
25. श्री ध्यानदास, हरिशचंद सत्यग्रंथ, चो. पृ. 291–293।
26. वही, चो. 294।
27. वही, अंतिम दोहा।
28. श्री लालदास कृत महाभारत इतिहास सार, अंतिम दोहा।